Dr. Chiranjeev Kr. Thakur
Assistant Professor (GT)
Department of Sociology
VSJ College Rajnagar

## मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त (Middle Range Theory) - (रार्बट के मर्टन)

मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त का विचार सर्वप्रथम समाजशास्त्री प्रो० टी.एच. मार्शल ने 1946 में दिया। सुव्यवस्थित रूप से इस सिद्धान्त को प्रस्तुत करने का श्रेय प्रो० रार्बट के मर्टन को जाता है। सन् 1957 में social theory and social structure नामक पुस्तक में मर्टन ने मध्य सीमावर्ती सिद्धान्त को प्रस्तुत किया। मर्टन ने कहा कि मध्यवर्ती सिद्धान्त तार्किक रूप से अन्तःसम्बन्धित ऐसी अवधारणा है जो व्यापक तथा मध्य सीमित क्षेत्र से सम्बन्धित होती है। इन सिद्धान्तों का कार्य छोटी-छोटी प्राक्कल्पनाओं और वृहद अमूर्त सिद्धान्तों के बीच की खाई को पाटना है।

छोटी-छोटी प्राक्कल्पनाओं में समान रूप से पायी जाने वाली अवधारणाओं से जिस सिद्धान्त का निर्माण किया जाता है, वे ही मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त हैं। मर्टन के अनुसार इसके ऊपर वृहद् तथा नीचे लघु सम्प्रदाय जैसे अध्ययनों पर आधारित लघु सिद्धान्त होते हैं। इन दोनों के बीच की स्थिति ही मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त है। मर्टन का मानना है कि जब तक समाज विज्ञान की अनुसंधान पद्धति यथार्थवादी विकसित नहीं हो जाती -

~~[illegible] समाज में~~ तब तक हमें मध्य सीमावर्ती सिद्धान्त को ही अपनाना चाहिए।

"राबर्ट के मर्टन के अनुसार," मध्य-सीमावर्ती ऐसे सिद्धान्त हैं जो दैनिक अनुसंधान में पर्याप्त मात्रा में होने वाली लघु किन्तु आवश्यक कार्य निर्वाही प्राक्कल्पनाओं के साथ सामाजिक व्यवहार सामाजिक संगठन तथा सामाजिक परिवर्तन में सभी निरीक्षित समानताओं व्याख्या प्रस्तुत करने वाले एक समन्वित सिद्धान्त को विकसित करने के लिए ~~एक समन्वित सिद्धान्त~~ सभी कुछ को समाहित करते हुए किये गये व्यवस्थित प्रयासों के मध्य में स्थित होते हैं।

ए. एल. रास के अनुसार," किसी विचाराधीन विषयवस्तु से सम्बन्धित परिभाषाओं अनुमानों तथा सामान्य प्रस्थापनाओं के एक ऐसे समन्वित समूह को सीमित सिद्धान्त कहा जाता है जिसके द्वारा विशिष्ट तथा परीक्षण योग्य प्राक्कल्पनाओं के एक व्यापक तथा स्थायी समूह का तार्किक आधार पर प्रतिपादन किया जा सकता है।

मर्टन का मानना है कि सिद्धान्त वास्तव में तर्कवाक्यों अथवा प्रस्थापनाओं के तार्किक अन्तर्सम्बन्धों की ऐसी व्यवस्था है जिससे रूपगत एकं समानताएं प्राप्त की जा सकें। मर्टन के अनुसार समाज विज्ञान में अभी पूर्ण व्यापक -

सिद्धान्त का निर्माण सम्भव नहीं है। इनके पारसंस तथा सोरोकिन द्वारा दिये गये वृहद व्यवस्था के सिद्धान्तों की आलोचना करते हुए मर्टन कहते हैं कि ऐसे सिद्धान्त तथ्य और तर्क पर आधारित नहीं हैं। इसे दर्शन की पद्धति कहा जाना अधिक उचित है।

मर्टन के अनुसार मध्य-सीमावर्ती के सिद्धान्त सामाजिक घटनाओं के सीमित पक्षों से सम्बन्धित होते हैं अर्थात मध्य-सीमावर्ती के सिद्धान्त एक ही समय में एक साथ सभी प्रकार के सामाजिक व्यवहार, सामाजिक संगठन और सामाजिक परिवर्तन को स्पष्ट नहीं कर सकते हैं बल्कि ये तो सिर्फ किसी सा० घटना के निश्चित तथा सीमित पक्ष से ही सम्बन्धित होते हैं।

मर्टन ने मध्यवर्ती सिद्धान्त के निर्माण विधि की विवेचना करते हुए कहा है कि प्रतिदिन की घटनाओं को परिसीमित करके सिद्धान्त निर्माण करना चाहिए। सामान्यतया जब सामाजिक घटना को परिसीमित कर दिया जाता है तो उसे कोई पदनाम दे दिया जाता है। मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त का मुख्य उद्देश्य प्रतिदिन की घटनाओं से जुड़े सा० व्यवहार में तथ्यगत एकरूपता स्थापित करना है।

मर्टन के अनुसार ऐसे सिद्धान्त उपयोगिता तथा गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठ होते हैं जो अतिसीमित भी न हों तथा अतिव्यापक भी न हों, इसे ही मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त -

करते है। मर्टन ने मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त की श्रेणी में दुर्खीम के आत्महत्या और वेबर के प्रोटेस्टेंट आचार तथा पूंजीवाद को सम्मिलित करते हैं। इन दोनों मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त के साथ जोड़ते हुए निम्न प्रस्ताव रखे हैं -

(1) सामाजिक सम्बद्धता समूह के सदस्यों को उनकी विपदा में मनोवैज्ञानिक सहायता देती है।

(2) आत्महत्या की दर केवल यही बताती है कि व्यक्तियों की चिंताएं किसी सीमा तक दबी रहती हैं और उन पर कितना दबाव होता है।

(3) प्रोटेस्टेंट धर्मावलम्बियों में केथोलिक धर्मावलम्बियों की तुलना में कम सम्बद्धता होती है।

(4) इसलिये केथोलिक धर्मावलम्बियों में प्रोटेस्टेंट धर्मावलम्बियों की तुलना में आत्महत्या की दर निम्न होती है।

यदि पारसंस ने सामाजिक क्रिया के सामान्य सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है तो मर्टन ने प्रकार्यात्मक स्वरूप में ही मध्य-सीमावर्ती सिद्धान्त को रखा है।